अपक्षय
(WEATHERING)

परिभाषा तथा तात्पर्य

अपक्षय के अन्तर्गत चट्टानों के अपने स्थान पर टूटने-फूटने की क्रिया तथा उससे उस चट्टान विशेष या स्थान विशेष के अनावरण की क्रिया को सम्मिलित किया जाता है। इसमें चट्टान-चूर्ण के परिवहन को सम्मिलित नहीं किया जाता है। अपरदन की क्रिया में टूटे हुए चट्टानों के टुकड़ों के परिवहन (नदी, हिमानी, वायु, भूमिगत जल तथा सागरीय लहर द्वारा) तथा टुकड़ों द्वारा आपस में रगड़ एवं उनके द्वारा कटाव की क्रिया को सम्मिलित किया जाता है। अनाच्छादन (denudation) में अपक्षय तथा अपरदन दोनों क्रियाओ का समावेश किया जाता है। इस प्रकार अपक्षय में केवल **स्थैतिक क्रिया** तथा अपरदन में **गतिशील क्रिया** होती है। अनाच्छादन स्थैतिक तथा गतिशील दोनों क्रियाओं का योग है।

स्थैतिक क्रिया का साधारण तात्पर्य चट्टानों के अपने स्थान पर टूट-फूट से है। अपक्षय की क्रिया को निम्न शब्दों में संजोया जा सकता है — **अपक्षय चट्टानों के टूट-फूट की वह क्रिया है, जिसके अन्तर्गत चट्टानें विघटन तथा वियोजन द्वारा ढीली पड़कर तथा विदीर्ण होकर अपने स्थान पर ही बिखर कर रह जाती हैं।**[1] लेखक की उपर्युक्त परिभाषा के अन्तर्गत अपक्षय की क्रिया के लिए दो आवश्यक तत्व दिखाई पड़ते हैं। प्रथम्, चट्टानों का विघटन (disintegration) तथा वियोजन (decomposition)। भौतिक क्रियाओं (ताप, तुषारपात forst, जल आदि) द्वारा चट्टानों के ढीले पड़ने को **'विघटन'** तथा रासायनिक कारकों (oxidation, hydration, carbonation etc.) द्वारा चट्टानों के कमजोर तथा ढीले पड़ने को **वियोजन** कहते हैं। इस प्रकार विघटन तथा वियोजन के कारण चट्टानें ढीली पड़ जाती हैं तथा बाद में टूट कर बिखर जाती हैं। दूसरी प्रमुख विशेषता चट्टानों के अपने स्थान पर विदीर्ण होने से सम्बन्धित है। इस प्रकार अपक्षय में परिवहन का जरा भी हाथ नहीं रहता है। उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए **आर्थर होम्स** ने अपक्षय की परिभाषा निम्न रूप में प्रस्तुत की है–

"अपक्षय उन विभिन्न भूपृष्ठीय (subaerial) प्रक्रियाओं का प्रभाव है, जो कि चट्टानों के नष्ट होने तथा विघटन में सहायता प्रदान करती हैं, बशर्ते कि ढीले पदार्थों का बड़े पैमाने पर परिवहन न हो।"

इस प्रकार **होम्स** महोदय ने अपक्षय की सीमा को न्यायोचित ढंग से अंकित कर दिया है तथा जल तथा वायु के कार्यों, को जो कि अपरदन से सम्बन्धित होते हैं, अपक्षय की क्रिया से अलग कर दिया है। यदि **स्पार्क्स** महोदय के 'अपक्षय' पर विचार कर विश्लेषण किया जाय तो उपर्युक्त विवरण को ही बल मिलता है। स्पार्क्स महोदय भी अपक्षय के अन्तर्गत चट्टानों के स्थान पर ही टूटने की क्रिया को सम्मिलित करते हैं।

"पृथ्वी की सतह पर प्राकृतिक कारणों द्वारा चट्टानों के अपने ही स्थान पर यांत्रिक विधि द्वारा टूटने अथवा रासायनिक वियोजन की क्रिया को 'अपक्षय' कहा जाता है।"

अपक्षय के अन्तर्गत दो प्रकार के परिवर्तन होते हैं। प्रथम, भौतिक परिवर्तन होता है जिसके अन्तर्गत ताप परिवर्तन, तुषार-क्रिया तथा जीव-जन्तुओं द्वारा चट्टानों का विघटन होता है। द्वितीय प्रकार का परिवर्तन रासायनिक होता है, जिसके अन्तर्गत जल (स्थिर), आक्सीजन, कार्बन-डाई-आक्साइड तथा जीवों द्वारा चट्टानों में वियोजन

होता है। उपर्युक्त कारक (भौतिक, रासायनिक तथा जीव सम्बन्धी) एक साथ भी कार्य कर सकते हैं तथा अलग-अलग भी। उपर्युक्त विवरण के आधार पर अपक्षय की एक निम्न परिभाषा प्रस्तुत की जा सकती है –

"अपक्षय ताप, जल, वायु तथा प्राणियों का कार्य है जिनके द्वारा यांत्रिक तथा रासायनिक परिवर्तनों से चट्टानों में टूट-फूट होती रहती है।"

Weathering is the work of wind, temperature, water and organisms that tend to break down the rocks by mechanical or physical and chemical change. लेखक [1]।

यहाँ पर स्मरणीय है कि जलवायु या प्राणियों के केवल उतने ही कार्य का अध्ययन अपक्षय के अन्तर्गत किया जाता है, जिससे चट्टानों का टूटना केवल उनके स्थान पर ही सीमित रहता है। यदि अपनी गति द्वारा उपर्युक्त कारक (जल, वायु, तुषार आदि) चट्टानों या धरातलीय भाग में परिवर्तन लाते हैं तो उन्हें अपरदन के अन्तर्गत रखते हैं।

अपक्षय को नियंत्रित करने वाले कारक

(Factors Controlling Weathering)

अपक्षय को प्रभावित करने वाले निम्न कारकों का उल्लेख किया जा सकता है–

1. चट्टान का संगठन तथा संरचना

चूँकि अपक्षय का प्रमुख रूप चट्टान में विघटन तथा वियोजन है, अतः स्पष्ट है कि कमजोर तथा असंगठित चट्टानों में ये क्रियाएं आसानी से घटित हो सकती हैं। उदाहरण के लिए रंध्रपूर्ण तथा घुलनशील खनिजों वाली चट्टानों में रासायनिक अपक्षय शीघ्रता से सम्पन्न होता है। चट्टानों की परत की स्थिति का भी प्रभाव अपक्षय की सक्रियता पर पड़ता है। जिन चट्टानों में इन परतों की स्थिति लम्बवत् या उर्ध्वाकार रूप में होती है, उनमें तापीय भिन्नता, तुषारपात, जल तथा हवा का प्रभाव शीघ्र होने लगता है तथा जैसे चट्टान ढीली पड़ती है, लम्बवत् स्तर के कारण उनकी टूटन तथा गुरुत्व के कारण नीचे की ओर खिसकाव प्रारम्भ हो जाता है। इसके विपरीत यदि चट्टानों के स्तर क्षैतिज रूप में मिलते हैं, तो उनमें संगठन अधिक होता है तथा उनका विघटन एव वियोजन आसानी से शीघ्र नहीं हो पाता है। चट्टानों की संधियों का यांत्रिक अपक्षय पर सर्वाधिक प्रभाव होता है। अधिक संधियों वाली चट्टान में शीतोष्ण कटिबन्धीय भागों में तुषार के कारण विस्तार तथा संकुचन होता रहता है, जिस कारण विघटन शीघ्रता से प्रारम्भ हो जाता है। इसी प्रकार उष्ण भागों में तापीय अंतर के कारण (रात्रि तथा दिन में) इन संधि-युक्त चट्टानों में फैलाव तथा संकुचन अधिक होने से विघटन होता रहता है।

2. स्थल के ढाल का स्वभाव

ढाल यांत्रिक अपक्षय तथा मुख्य रूप से अपक्षय से उत्पन्न चट्टान-चूर्ण के सरकने को सर्वाधिक नियंत्रित करता है। यदि किसी भी स्थान में चट्टानी भागों का ढाल खड़ा है, तो यांत्रिक अपक्षय के कारण जरा भी विघटन होने से चट्टानों में ढीलापन आने से चट्टानों का शीघ्र टूटकर नीचे सरकना प्रारम्भ हो जाता है। यदि अपक्षय से उत्पन्न सामग्री का शीघ्र स्थानान्तरण हो जाता है, तो अपक्षय की गति और अधिक प्रबल हो जाती है। इसके विपरीत सामान्य ढाल वाले भागों में अपक्षय तीव्र रूप में नहीं हो पाता है। इसके कई कारण हैं। प्रथम यह कि सामान्य ढाल होने के कारण उत्पन्न सामग्री का स्थानान्तरण नहीं हो पाता है तथा दूसरा यह कि कम ढाल होने से चट्टानों का संगठन शीघ्रता से कमजोर नहीं हो पाता है।

3. जलवायु में विभिन्नता

यह कारक दो रूपों में प्रभाव डालता है। एक तो यह कि भूपटल के विभिन्न भागों में जलवायु की विभिन्नता के कारण अपक्षय में भिन्नता तथा उसकी सक्रियता में पर्याप्त अन्तर मिलता है। उदाहरण के लिए उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र भागों में अत्यधिक जल के कारण रासायनिक अपक्षय अधिक होता है। इन स्थानों में आर्द्रता तथा ताप की अधिकता के कारण सभी प्रकार के लवण के अपक्षालक कार्य (leaching action घुलाकर बहाने की क्रिया को 'लीचिंग' या अपक्षालन कहते हैं– washing or draining by percolation) तथा घोलक कार्य अधिक सक्रिय होते हैं जिस कारण धरातलीय भागो में रासायनिक अपक्षय द्वारा अपक्षालन तथा घोलन (solution) अधिक होता है। यहाँ पर यांत्रिक अपक्षय नगण्य होता है। इसके विपरीत उष्ण तथा शुष्क मरुस्थलीय जलवायु वाले भाग अर्थात् उष्ण कटिबन्धी मरुस्थलीय भागों में यांत्रिक अपक्षय अधिक होता है क्योंकि चट्टानी भागों में दिन के अधिक ताप तथा रात्रि के कम ताप के कारण क्रमशः फैलाव

तथा संकुचन होते रहने से विघटन आसान हो जाता है। शुष्क शीतोष्ण कटिबन्धी जलवायु वाले प्रदेशों में भी रासायनिक अपक्षय की तुलना में यांत्रिक अपक्षय अधिक होता है। क्योंकि चट्टानों के फटन तथा दरारों एवं संधियों में दिन का समाविष्ट जल रात में जमकर ठोस हो जाता है तथा दिन में पुनः पिघलकर तरल हो जाता है। इस क्रिया की पुनरावृत्ति के कारण चट्टानें ढीली पड़ जाती हैं तथा विघटन प्रारम्भ हो जाता है। शीत जलवायु वाले भागों में सभी प्रकार के अपक्षय प्रायः नगण्य होते हैं। यदि धरातल पूर्ण रूप से जमकर बर्फ से आच्छादित हो जाता है तो यांत्रिक एवं रासायनिक सभी प्रकार के अपक्षय स्थगित हो जाते हैं तथा यह क्रिया तभी सक्रिय हो पाती है जब कि बर्फ पिघल जाती है। इतना ही नहीं, एक ही स्थान पर जलवायु की वार्षिक विभिन्नता का भी प्रभाव अधिक होता है। उदाहरण के लिए मानसूनी गर्म प्रदेशों में वर्षाकाल में अधिक नमी तथा ताप के कारण रासायनिक अपक्षय अधिक होता है, परन्तु शुष्क ग्रीष्मकाल में यांत्रिक अपक्षय सक्रिय होता है।

4. वनस्पति का प्रभाव

किसी भी स्थान विशेष में वनस्पतियों की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति का अपक्षय के स्वभाव पर प्रभाव होता है। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि वनस्पतियाँ आंशिक रूप में अपक्षय के कारक भी हैं तथा आंशिक रूप में उनके लिए अवरोधक भी हैं। वास्तव में वनस्पतियाँ अपनी जड़ों द्वारा चट्टानों को जकड़े रहती हैं जिससे चट्टानों का संगठन अधिक बढ़ जाता है। इसी प्रकार वनस्पतियों के आवरण से सूर्य-ताप आदि का प्रभाव आवरण के नीचे वाली चट्टानों पर नहीं हो पाता है। इस प्रकार जिन भागों में वनस्पतियों की स्थिति होती है, वहाँ पर अपक्षय सीमित होता है। परन्तु इनके अभाव में स्थिति पूर्णतया विपरीत होती है। इस विषय में मतभेद है। वनस्पतियों की जड़ों में कई प्रकार के कीड़े-मकोड़े होते हैं जो कि चट्टानों में शनैः शनैः विघटन लाते रहते हैं तथा वृक्षों की जड़ों के चट्टानों में प्रवेश के कारण उनकी संधियाँ विस्तृत हो जाती हैं, जिससे चट्टान ढीली पड़ जाती है तथा विघटन प्रारम्भ हो जाता है।

अपक्षय के प्रकार

ऊपर यह स्पष्ट किया जा चुका है कि चट्टानों में विघटन तथा वियोजन मुख्यरूप से क्रमशः यांत्रिक या भौतिक रासायनिक परिवर्तनों द्वारा होता है। जीवों तथा वनस्पतियों द्वारा भी अपक्षय होता है तथा इनके कार्य भी यांत्रिक तथा रासायनिक दो रूपों में सम्पन्न होते हैं। इस आधार पर अपक्षय में भाग लेनेवाले कारकों को हम निम्न रूप में विभाजित कर सकते हैं –

1-भौतिक या यांत्रिक कारक
(physical or mechanical agents)

(i) जल, (ii) सूर्य-ताप, (iii) तुषार, (iv) वायु तथा (v) दाब

2-- रासायनिक कारक
(chemical agents)

(i) आक्सीजन, (ii) कार्बन-डाई-आक्साइड, (iii) हाइड्रोजन।

3-- प्राणिवर्गीय कारक (biological agents)

(i) वनस्पतियाँ, (ii) जीव-जन्तु तथा (iii) मानव

विघटन तथा वियोजन में भाग लेने वाले कारकों (agents) के आधार पर अपक्षय का निम्न रूप में विभाजन किया जा सकता है–

1-- भौतिक या यांत्रिक अपक्षय

(i) ताप के कारण बड़े-बड़े टुकड़ों में विघटन

(ii) ताप के कारण छोटे-छोटे कणों में विघटन

(iii) तुषार के कारण बड़े-बड़े टुकड़ों में विघटन

(iv) ताप तथा वायु के कारण अपदलन (exfoliation)

(v) दाब-मुक्ति के कारण चट्टान का टूटना

2-- रासायनिक अपक्षय

(i) आक्सीकरण या आक्सीजनीकरण

(ii) कार्बोनेटीकरण या कार्बोनेशन

(iii) सिलिका का पृथक्कीकरण या डीसिलिकेशन

(iv) जलयोजन या हाइड्रेशन

3-- प्राणिवर्गीय अपक्षय

(i) वानस्पतिक अपक्षय

(ii) जैविक अपक्षय

(iii) मानव द्वारा अपक्षय

1. यांत्रिक अपक्षय

सूर्य-ताप, तुषार तथा वायु द्वारा चट्टानों में विघटन होने की क्रिया को 'यांत्रिक अपक्षय' कहा जाता है। यांत्रिक अपक्षय में यद्यपि ताप का परिवर्तन सर्वाधिक प्रभावशाली कारक है तथापि इसके अन्तर्गत दाब मुक्ति (pressure-release), जल का जमना-पिघलना तथा गुरुत्व का भी सहयोग रहता है। यांत्रिक अपक्षय का निम्न रूपों में उल्लेख किया जा सकता है –

(i) ताप के कारण चट्टानों का बड़े-बड़े टुकड़ों में विघटन (block disintegration due to temperature change)– तापीय परिवर्तन का चट्टानों पर अत्यधिक प्रभाव होता है। कई विद्वानों ने चट्टानों की कई ऐसी किस्मों का पता लगाया है जिन पर तापीय परिवर्तन का प्रभाव नहीं होता है, चट्टान-चूर्ण से निर्मित चट्टानों (clastic rocks) खासकर शेल (shale) तथा बालुकापत्थर पर तापीय अन्तर का प्रभाव नगण्य होता है। इनमें चट्टानों के कण एक दूसरे से अम्लीय अथवा क्षारीय पदार्थ की पतली सतह द्वारा अलग रहते हैं जिस कारण ताप का प्रभाव नहीं हो पाता है। इसके विपरीत रवेदार चट्टानों में विभिन्न कण एक दूसरे से संगठित होते हैं तथा ताप के बढ़ने से प्रत्येक कण फैलता है तथा तापीय ह्रास के साथ उनमें सिकुड़न होती है। यदि ग्रेनाइट चट्टान की परत का ताप 65.5^0 सेण्टीग्रेड बढ़ा दिया जाय तो प्रति 30-48 मीटर की दूरी पर 2.54 सेण्टीमीटर का ग्रेनाइट की परत में क्षैतिज विस्तार हो जाता है। अगर उतना ही ताप घटा दिया जाय तो 2.54 सेमी० दूरी का ह्रास हो जाता है। इसके विपरीत **ब्लैक वेल्डर** नामक विद्वान ने सन् 1925 ई० में ग्रेनाइट के टुकड़े का ताप 200° सेण्टीग्रेड बढ़ाने के लिए उन्हें गर्म तेल में छोड़ा, परन्तु प्रयोग के आधार पर ज्ञात हुआ कि ग्रेनाइट तथा बेसाल्ट पर अचानक ताप की वृद्धि का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। **ग्रिग्स महोदय** ने एक लम्बे प्रयोग के आधार पर उपर्युक्त निष्कर्ष की ही प्राप्ति की। तापीय परिर्वतन द्वारा चट्टानों का फैलाव तथा संकुचन द्वारा विघटन कार्य उष्ण मरुस्थलीय प्रदेशों में अधिक सम्पन्न होता है। इन स्थानों में रेत-कणों (sands) की अधिकता के कारण दैनिक तापान्तर अधिक होता है, जिस कारण चट्टानों का खुला हुआ भाग या नग्न भाग दिन में अत्यधिक ताप के कारण तप्त हो जाता है, जिस कारण उसकी वाह्य परत में फैलाव होने लगता है। रात के समय इसके विपरीत दशा होती है, क्योंकि तापक्रम में भारी कमी आ जाती है। जिस कारण चट्टाने शीतल होने लगती हैं, जिससे उनकी बाहरी परत में संकुचन होने लगता है। इस प्रकार चट्टानों के तप्त होने तथा शीतल होने की क्रिया की पुनरावृत्ति के कारण चट्टानों में बराबर फैलाव तथा संकुचन होता रहता है, जिस कारण उनमें तनाव या खिचाव की स्थिति पैदा हो जाती है। इस क्रमिक फैलाव एवं संकुचन के कारण चट्टानों में समानान्तर जोड़ या संधियों का विकास हो जाता है। इन संधियों के सहारे चट्टानें बड़े-बड़े टुकड़ों में टूटने लगती हैं। इस क्रिया को 'बड़े-बड़े टुकड़ों में विघटन की क्रिया' कहते हैं।

(ii) ताप के कारण छोटे-छोटे कणों में विघटन (granular disintegration of rocks due to temperature)– उन शुष्क मरुस्थलीय भागों में, जहाँ पर दैनिक तापान्तर अधिक होता है, बड़े-बड़े कणों वाली चट्टानों मे टूट-टूटकर बिखरने (shattering) की क्रिया अधिक प्रचलित होती है। कई ऐसी परतदार तथा आग्नेय चट्टानें होती हैं जो बड़े-बड़े कणों वाली होती हैं तथा उनके खनिजों एवं रंगों मे पर्याप्त विभेद होता है। जहाँ पर किसी चट्टान विशेष की संरचना कई विभिन्न रंगों द्वारा हुई होती है, वहाँ उनके विभिन्न भागों में ताप ग्रहण करने की क्षमता अलग-अलग होती है। इस प्रकार एक ही चट्टान विशेष के विभिन्न भागों में ताप की विभिन्न मात्रा का शोषण होता है। फलस्वरूप उनका फैलाव भी अलग-अलग होता है। इसी तरह रात के समय तापक्रम में कमी के कारण उन चट्टान के विभिन्न भागों में संकुचन की मात्रा भी भिन्न-भिन्न होती है। नतीजा यह होता है कि चट्टान के विभिन्न भागों में तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है, जिस कारण चट्टानों का छोटे-छोटे टुकड़ों में विघटन प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकार की क्रिया के घटित होते समय विचित्र प्रकार की आवाज होती है।

(iii) वर्षा के जल द्वारा चट्टानों का टूट-टूट कर बिखरना (shattering due to rain-water and heat)– गर्म प्रदेशो में जहाँ पर ताप अधिक होता है, इस क्रिया का सम्पादन अधिक होता है। ग्रिग्स महोदय ने तापीय अन्तर के प्रभाव के समय अपने प्रयोगों के आधार पर यह बताया है कि तप्त चट्टानों के ऊपर जब अचानक जल की छीटें पड़ती हैं तो उनमें चटकने आ जाती हैं। चट्टानों पर तापीय अन्तर के परिणाम को ज्ञात करने के लिए ग्रिग्स महोदय ने विद्युत हीटर तथा ठण्डे पवन का सहारा लिया। सर्वप्रथम इन्होंने ग्रेनाइट चट्टान का 110° सेण्टीग्रेड तापक्रम बढ़ाया तथा बाद में इसे कम किया। तापक्रम के बढ़ाने तथा घटाने की प्रक्रिया को ग्रिग्स ने इतनी बार दुहराया, जितना कि प्रायः 224 वर्षों में प्राकृतिक ढंग से सम्भव हो सकता था। परन्तु इस तापीय अन्तर का ग्रेनाइट चट्टान के ऊपर कोई

प्रभाव परिलक्षित नहीं हुआ। पुनः ग्रिग्स ने इसे ढाई वर्ष के लिए दुहराया तथा चट्टान को शीतल करने के लिए ताप को घटाने की अपेक्षा (ठंडी वायु) ठंडे पानी के छींटों का प्रयोग किया। फलस्वरूप चट्टानों में चटकनें उत्पन्न हो गयीं। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि चट्टानों की ये चटकनें जल के साथ मिली आक्सीजन तथा कार्बन-डाई-आक्साइड गैसों के रासायनिक प्रभाव के कारण हुई हैं। जो भी हो, इतना तो निश्चितता के साथ कहा जा सकता है कि सूर्यताप द्वारा तप्त चट्टानों के ऊपर जब अचानक वर्षा की फुहारें पड़ती हैं तो उनमें शीघ्रता से चटकने पड़ जाती हैं तथा चट्टानें छोटे-छोटे कणों में टूट कर बिखरने लगती हैं। इस क्रिया को एक और उदाहरण से समझाया जा सकता है। यदि शीशे की तप्त चिमनी पर जल की छींटें मारी जांय तो शीशा जोरों से चटककर टूट जाता है। रेगिस्तानी भागों में अचानक वृष्टि के कारण यह क्रिया अधिक रूप में सम्पादित होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के टेक्सास प्रान्त में इस क्रिया के कारण चट्टानों का बिखरना सामान्य घटना है।

(iv) तुषार कणों द्वारा बड़े-बड़े टुकड़ों में विघटन (block disintegration due to frost) – तुषार द्वारा यांत्रिक अपक्षय के अन्तर्गत चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़ों में विघटन शीतोष्ण तथा शीत कटिबन्धीय भागों में अधिक प्रचलित होता है। इसके अलावा उच्च पर्वतों के ऊपरी भाग पर भी यह क्रिया अधिक सक्रिय होती है। वास्तव में यह क्रिया उन स्थानों में अधिक क्रियाशील होती है, जहाँ पर जल का जमना तथा पिघलना क्रम से एक दूसरे के बाद घटित होता है। तुषारपात की क्रिया का सम्पादन दो रूपों में होता है। प्रथम तो चट्टानों के कणों के अन्दर स्थित जल के जमने तथा पिघलने से, तथा दूसरे, चट्टानों की दराजों में स्थित जल के द्वारा। चट्टान के संगठन का प्रभाव इस प्रकार के यांत्रिक अपक्षय पर अधिक होता है। यही कारण हैं कि अधिक सशक्त तथा संगठित रवेदार ग्रेनाइट चट्टानों में रिक्त स्थान की कमी के कारण जल के संचयन की संभावना कम रहती है। अतः ग्रेनाइट चट्टान तुषारपात द्वारा कम प्रभावित होती है। वैसे ग्रेनाइट में भी कुछ कणों में जल रखने की क्षमता होती है। इसके विपरीत परतदार शैल, जो रंध्रयुक्त होती है, जल के जमने तथा पिघलने से सर्वाधिक प्रभावित होती है। बालुका पत्थर तथा शेल आदि चट्टानें इस क्रिया के कारण शीघ्रता से छोटे-छोटे टुकड़ों में विभक्त हो जाती हैं। प्रथम प्रकार के विघटन में चट्टानों के कणों के अन्दर जल समाविष्ट होता है। रात के समय यह जल जमकर बर्फ बन जाता है तथा दिन में पिघलकर तरल हो जाता है। इस क्रिया की पुनरावृत्ति के कारण चट्टान विशेष के कणों में दबाव तथा तनाव होने से चट्टान का छोटे-छोटे कणों में विघटन प्रारम्भ हो जाता है। यह क्रिया मंथर गति से होती है तथा इसका प्रभाव नगण्य होता है।

इसके विपरीत दूसरी क्रिया के अन्तर्गत चट्टानों के अन्दर छोटे-छोटे छिद्र तथा दराज होते हैं, जिनमें जल एकत्र हो जाता है। दिन के समय जल का समावेश इन रिक्त स्थानों में हो जाता है तथा रात के समय ताप में कमी होने तथा उसके हिमांक बिन्दु के प्राप्त हो जाने के बाद रिक्त स्थानों में स्थित जल जमकर बर्फ के रूप में ठोस हो जाता है। फलस्वरूप उसके आयतन में विस्तार होता है, क्योंकि साधारण नियम के अनुसार जब जल जमकर ठोस हो जाता है तो उनके आयतन में 10 प्रतिशत का विस्तार हो जाता है। आयतन में विस्तार के कारण चट्टान पर प्रति वर्ग फुट पर 150 टन का दबाव पड़ता है, जिस कारण चट्टानों में खासकर दराजों में विस्तार होने लगता है। दिन के समय ताप-वृद्धि के कारण बर्फ पिघलकर जल का रूप धारण कर लेती है, जिससे उसके आयतन में कमी हो जाती है। फलस्वरूप दराजों में संकुचन होने लगता है, इसी क्रिया की क्रम से पुनरावृत्ति के कारण चट्टानों की दराजों में फैलाव तथा संकुचन होता रहता है, जिस कारण चट्टान निहायत कमजोर हो जाती है। उसमें विघटन प्रारम्भ हो जाता है, जिससे चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़े टूटकर अलग होने लगते है। जब यह क्रिया उच्च पर्वतीय भाग में घटित होती है, तो चट्टानों के टुकड़े गुरुत्व शक्ति के कारण निचले ढाल की ओर सरकने लगते हैं, जिसे **भूमि सर्पण** (solifluction) कहते हैं तथा पर्वतों के निचले भाग पर जब इनका ढेर के रूप में संचयन हो जाता है तो उसे **टालस** कहते हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि उपर्युक्त क्रिया के फलस्वरूप 7 मीटर ऊँची चट्टान के नीचे लगभग 0.6 मीटर ऊँचा मलवा या टालस का ढेर संचित हो जाता है।

(v) वायु तथा ताप द्वारा अपदलन (exfoliation due to temperature and wind) – रेगिस्तानी, अर्द्ध-रेगिस्तानी तथा मानसूनी प्रदेशों में ताप तथा वायु के सम्मिलित कार्य के द्वारा चट्टानों की परतों से संकेन्द्रीय परत अथवा क्षैतिज परतों का बिलगाव होता रहता है। इसे अपदलन या परतों का उखड़ना कहते हैं। यह क्रिया प्रायः रवेदार चट्टानों में अधिक घटित होती है। उष्ण रेगिस्तानी भागों में तापीय विभिन्नता के कारण अर्थात् रात में कम ताप के कारण चट्टानों में ताप संकुचन तथा दिन में अधिक ताप के कारण फैलाव होने से चट्टानों की ऊपरी परतें ढीलीं पड़ जाती हैं। किसी भी क्षेत्र में चट्टान के ऊपरी भाग तथा उसके नीचे

वाले भाग जब विभिन्न दर से गरम होते हैं तो **फ्लेकिंग** की क्रिया होती है। जिन चट्टानों में तापीय चालकता (thermal conductivity) कम होती है, उनमें दिन में सौर्यिक विकिरण का प्रवेश कुछ सेण्टीमीटर तक ही हो पाता है। इस तरह शैल के ऊपरी आवरण (जो कि गर्म होने के कारण अधिक फैलती है) तथा उसके नीचे स्थित शैल (जो सौर्यिक विकिरण तरंगों के प्रविष्ट न होने से प्रभावित नहीं होती है) के प्रसार की विभिन्नता के कारण ऊपरी आवरण में फ्लेकिंग प्रारम्भ हो जाती है तथा शैल-चादर अलग हो जाती है। वेगवान वायु के सम्पर्क में आने से ढीली परतें चट्टानों से अलग होती रहती हैं। इस प्रकार चट्टान क्रमशः धीरे-धीरे नग्न होती जाती है। यह क्रिया उसी प्रकार घटित होती है, जैसे कि फल से छिलका उतारा जाता है। यह प्रक्रिया इतनी मंथर गति से होती है कि इसका अवलोकन नहीं हो पाता है। परतों के इस प्रकार उधड़ने का कार्य ऊपर उठी चट्टानों, छोटी-छोटी पहाड़ियों तथा चोटियों पर अधिक होता है। रांची शहर के पास **कांके गुम्बद** अपदलन अपक्षय का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसे **ओनियन अपक्षय** (onion weathering) भी कहते हैं।

(vi) दाब-मुक्ति द्वारा विघटन तथा अपदलन (disintegration and exfoliation due to pressure release) -- कई आग्नेय तथा रूपान्तरित चट्टानें पृथ्वी के अन्दर अन्य चट्टानों के नीचे दबी रहती हैं, जिस कारण उच्च दबाव एवं ताप के कारण उनमें कणों की संरचना होती है। परन्तु ऊपर की चट्टानों का जब अपरदन द्वारा लोप हो जाता तो ये दबी चट्टानें ऊपर दृष्टिगत होती हैं। फलस्वरूप उनमें से दबाव हट जाता है। इस कारण चट्टानों में दरारें पड़ जाती हैं तथा विघटन एवं अपदलन प्रारम्भ हो जाता है। चट्टान के ऊपरी भाग में चटकन लम्बवत होती है। इसे **चादरी विभाजन** (sheeting) कहते हैं।

2. रासायनिक अपक्षय (Chemical Weathering)

वायुमण्डल के निचले स्तर में आक्सीजन, कार्बन-डाई-आक्साइड गैसों तथा जलवाष्प की प्रधानता होती है, परन्तु जब तक इनका संयोग नमी या जल से नहीं होता है अर्थात् जब तक ये शुष्क होते हैं तब तक अपक्षय की दृष्टि से ये तत्व क्रियाहीन होते हैं, परन्तु जैसे ही इनका सहयोग जल से हो जाता है, ये सक्रिय घोलक साधन हो जाते हैं। इनके संयोग से चट्टानों में रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं। इस क्रिया के अन्तर्गत चट्टानों में ऐसे पदार्थों तथा खनिजों की रचना हो जाती है, जो या तो मूल पदार्थ से अधिक आयतनवाले या कम आयतन वाले होते हैं। चट्टानों के खनिजों में इस नवीन व्यवस्था के कारण उनमें वियोजन प्रारम्भ हो जाता है। रासायनिक अपक्षय का कार्य पृथ्वी की सतह के ऊपर तथा नीचे, दोनों क्षेत्रों में होता रहता है। आक्सीजन तथा कार्बन-डाई-आक्साइड आदि गैसों के प्रभाव से ये रासायनिक परिवर्तन कई रूपों में सम्पन्न होते हैं। इनका अलग-अलग उल्लेख आवश्यक है। चूना पत्थर पर रासायनिक अपक्षय अधिक होता है। उष्ण, उपोष्ण एवं शीतोष्ण आर्द्र प्रदेशों में जल तथा कार्बन-डाई-आक्साइड गैस के सहयोग से चूना पत्थर की घुलन क्रिया (solutional process) द्वारा रासायनिक अपक्षय निम्न चरणों में सम्पादित होता है—

(i) कैलसियम आक्साइड (CaO) की जल (H_2O) के साथ अभिक्रिया (reaction) होने से कैलसियम हाइड्रोक्साइड ($Ca(OH)_2$) बनता है–

$$CaO + H_2O \rightarrow Ca(OH)_2$$

(ii) कैलसियम हाइड्रोक्साइड की कार्बन-डाई-आक्साइड (CO_2) से अभिक्रिया होने पर कैलसियम कार्बोनेट ($CaCO_3$) बनता है–

$$Ca(OH)_2 + CO_2 \rightarrow CaCO_3 + H_2O$$

(iii) कैलसियम कार्बोनेट की कार्बन-डाई-आक्साइड तथा जल से अभिक्रिया होने पर कैलसियम बाईकार्बोनेट ($Ca(HCO_3)_2$) बनता है –

$$CaCO_3 + CO_2 + H_2O \rightarrow Ca(HCO_3)_2$$

(iv) कार्बन-डाई-आक्साइड (CO_2) की अनुपस्थिति में कैलसियम कार्बोनेट का जल में सीमित मात्रा में विघटन (dissociation) होता है–

$$CaCO_3 \leftrightarrow Ca^{++} + CO_3^{--}$$

(v) कार्बन-डाई-आक्साइड जब जल में घुलती है तो कार्बोनिक एसिड (H_2CO_3) बनता है –

$$CO_2 + H_2O \leftrightarrow H_2CO_3$$

(vi) कार्बोनिक एसिड का धनात्मक हाइड्रोजन आयन तथा ऋणात्मक बाईकार्बोनेट आयन में विघटन (dissociation) होता है–

$$H_2CO_3 \leftrightarrow H^+ + HCO_3^-$$

स्मरणीय है कि समीकरण iv से vi तक अभिक्रिया उत्क्रमणीय (reversible reaction) होती है। जल में CO_2 की कुल घुलने वाली मात्रा (जो घुलने पर कार्बोनिक एसिड बनती है तथा पुनः बाईकार्बोनेट में विघटित होती है) वायुमण्डल में स्थित CO_2 के आंशिक दाब (partial pressure) तथा तापमान पर निर्भर करती है। CO_2 की घुलनशीलता (solubility) दाब से सीधे रूप में तथा तापमान से विलोम रूप में सम्बन्धित होती है। अर्थात् यदि दाब अधिक होगा एवं तापमान कम तो CO_2 की घुलनशीलता बढेगी जबकि दाब कम होने तथा तापमान अधिक होने पर घुलनशीलता घटती है। इसके विपरीत ठोस की घुलनशीलता तापमान से सीधे रूप में संबंधित होती है, अर्थात् तापमान बढ़ने पर घुलनशीलता बढ़ती है तथा तापमान कम होने पर घटती है।

(i) आक्सीडेशन (आक्सीकरण)– वायु की आक्सीजन का संयोग जब जल से होता है, तो जल से मिली आक्सीजन की क्रिया चट्टानों के खनिजों पर होती है। इस कारण खनिजों में आक्साइड बन जाते हैं, जिससे चट्टानों में वियोजन होने लगता है। आक्सीजन की इस क्रिया को 'आक्सीकरण' कहते हैं। जिन चट्टानों में लोहे के यौगिक अधिक होते हैं उनमें आक्सीकरण का प्रभाव सर्वाधिक होता है। आग्नेय चट्टानों में लोहा, लौह सल्फाइट या पाइराट के रूप में पाया जाता है। इन पर आक्सीकरण के प्रभाव से प्रायः जंग (rust) लग जाता है, जिस कारण चट्टनें ढीली पड़ जाती हैं एवं वियोजन होने लगता है। पाइराइट पर जल तथा आक्सीजन के सम्मिश्रण के प्रभाव से गन्धक का अम्ल उत्पन्न हो जाता है, जिससे चट्टानें गलने लगती हैं। उष्णार्द्र भागों में आक्सीकरण अधिक सक्रिय रहता है, जिस कारण रासायनिक परिवर्तन के कारण वहाँ पर मिट्टियों का रंग लाल, पीला या भूरा हुआ करता है। कभी-कभी आक्सीकरण तथा जलयोजन (hydration) की क्रियाएं साथ-साथ कार्य करती हैं। उदाहरण के लिए लोहे के आक्साइड पर जलयोजन होने से मिट्टियों का रंग पीला अथवा नारंगी हो जाता है।

(ii) कार्बोनेशन– जब कार्बन-डाई-आक्साइड गैस का मिश्रण जल से होता है, तो कई प्रकार के कार्बोनेट बन जाते हैं जो कि जल में घुलनशील होते हैं। इन कार्बोनेटों के निर्माण के कारण चट्टानों के घुलनशील तत्व उनसे अलग होकर जल के साथ हो लेता है। इसी कारण से कार्बोनेशन को 'घोलन' (solution) भी कहा जाता है। जब लौह सल्फाइड या पाइराइट पर कार्बन-डाई-आक्साइड से युक्त जल का प्रभाव होता है, तो उसके क्रमशः लोहे के कार्बोनेट तथा सलफ्यूरिक अम्ल (sulphuric acid) बन जाते हैं। लोहे का कार्बोनेट अत्यधिक घुलनशील होता है तथा जल के साथ शीघ्रता से चट्टान से अलग होकर मिल जाता है। चूने का पत्थर साधारण जल द्वारा नहीं घुल पाता है, परन्तु जब उसका संयोग कार्बन-डाई-आक्साइड गैस से होता है, तो चूने का पत्थर कैलसियम बाई कार्बोनेट में बदल जाता है जो कि आसानी से जल के साथ घुलकर मिल जाता है। कार्बोनेशन की क्रिया के कारण ही पोटाश या पोटैशियम कार्बोनेट की रचना होती है जो कि एक प्रकार का प्रमुख जीव-भोजन होता है। भूमिगत जल में कार्बन-डाई-आक्साइड का अंश अधिक रहता है, अतः चूने की चट्टानों वाले भागों में सतह के ऊपर तथा नीचे इस प्रकार के अपक्षय द्वारा कई प्रकार की स्थलाकृतियों के निर्माण हुए हैं। पूर्ववर्ती यूगोस्लाविया का कार्स्ट प्रदेश इसका प्रमुख उदाहरण है।

(iii) हाइड्रेशन या जलयोजन– चट्टानों का सम्पर्क जब जल से होता है, तो जल की हाइड्रोजन से चट्टानों के खनिजों में हाइड्रेशन की क्रिया होती है, अर्थात् चट्टानें जल सोख लेती हैं तथा उनके आयतन में वृद्धि हो जाती है। कभी-कभी यह विस्तार प्रारम्भिक आयतन से दो गुना हो जाता है। इस क्रिया से कभी-कभी मौलिक चट्टान के वास्तविक आयतन में 88 प्रतिशत तक विस्तार हो जाता है। इस प्रकार चट्टानों के आयतन में विस्तार के कारण उनके कणों तथा खनिजों में तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है, जिस कारण चट्टानें फैलकर टूटने लगती हैं। आग्नेय चट्टान पर हाइड्रेशन की क्रिया का अधिक प्रभाव पड़ता है तथा इस प्रकार के अपक्षय से आग्नेय चट्टान टूट-टूटकर परतदार शैलों में परिवर्तित होती रहती है। हाइड्रेशन की क्रिया द्वारा फेल्सपार नामक खनिज का परिवर्तन कओलिन मृत्तिका में हो जाता है। जिप्सम की संरचना मुख्य रूप से जलयोजन की क्रिया द्वारा ही हुई है।

(iv) सिलिका का पृथक्कीकरण (Desilication)– अनेक चट्टानों में सिलिका की मात्रा अधिक होती है। जब जल द्वारा रासायनिक विधि से सिलिका युक्त चट्टानों से सिलिका अलग हो जाता है, तो उस क्रिया को 'सिलिका का पृथक्कीकरण' या अलग होना कहते हैं। आग्नेय चट्टानों में खासकर ग्रेनाइट में सिलिका की मात्रा अधिक होती है। इसमें से कुछ क्वार्ट्ज के रूप में होते हैं तथा अधिकांश सिलिकेट के रूप में। सिलिकेट का जल द्वारा चट्टान से पृथक्कीकरण आसानी से हो जाता है, जिससे चट्टान ढीली पड़ जाती है तथा उसका वियोजन शीघ्र प्रारम्भ हो जाता है। यही कारण है कि आग्नेय चट्टान वाले प्रदेश में बहने

वाली नदियों में सिलिका की मात्रा, परतदार चट्टानों वाले भागों की अपेक्षा अधिक होती है, क्योंकि परतदार चट्टानों में सिलिका क्वार्ट्ज के रूप में होता है जो कि जल में शीघ्रता से घुलनशील नहीं होता है । रासायनिक अपक्षय की दृष्टि से बेसिक आग्नेय चट्टानों का वियोजन एसिड आग्नेय चट्टानों की अपेक्षा अधिक होता है ।

3. प्राणिवर्गीय अपक्षय (Biological Weathering)

वनस्पतियाँ तथा जीव-जन्तु, दोनों चट्टानों के विघटन तथा वियोजन में सहयोग प्रदान करते हैं । परन्तु यह उल्लेखनीय है कि इनके सभी कार्य विनाशात्मक ही नहीं होते है । जीव-जन्तु खासकर जो बिल बनाकर पृथ्वी के अन्दर रहते हैं, उनका काम निश्चय ही पृथ्वी की सतह में खोद-खाद करना रहता है, परन्तु वनस्पतियाँ यदि एक तरफ चट्टान को अपनी जड़ों द्वारा कमजोर तथा पोली बनाती हैं तो दूसरी तरफ उनमें सघनता तथा संगठन भी लाती हैं । प्रारम्भ से ही मानव-कार्य भी पृथ्वी-तल पर भौतिक आकृतियों में तोड़-फोड़ करता है । इन कारकों द्वारा अपक्षय की प्रक्रिया का हम अलग-अलग संक्षेप में अध्ययन करेंगे –

(i) **जीव-जन्तुओं द्वारा अपक्षय** (weathering due to animals)—पृथ्वी की ऊपरी सतह में मिट्टी में रहने वाले कई प्रकार के कीड़े-मकोड़े तथा बिलकारी प्राणी (burrowing animals बिल बनाकर रहने वाले जीव) रहते हैं जो कि शनैः-शनैः परन्तु लगातार धरातलीय चट्टानों में अपने विनाशात्मक कार्य अर्थात् बिल बनाने के लिए खनन-कार्य द्वारा उसे ढीली तथा पोली बनाते रहते हैं । बिलकारी जीवों में गोफर (एक प्रकार की गिलहरी), प्रेयरी कुत्ते, दीमक, लोमड़ी, गीदड़, चींटी, चूहा आदि प्रमुख हैं, जो कि अपने निवास के लिए चट्टानों को खोदकर उनमें बिल बनाते हैं, जिस कारण चट्टानें पोली तथा कमजोर हो जाती हैं एवं विघटन आसानी से होने लगता है । छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े, खास-कर केचुओं का जैविक अपक्षय में सर्वाधिक हाथ रहता है, जो कि प्रतिवर्ष अधिक मात्रा में निचली परतों से मिट्टी खोदकर ऊपरी सतह पर एकत्र करते रहते हैं । सामान्य मिट्टी में एक एकड़ भाग में 1,50,000 छोटे-छोटे कीड़े होते हैं जो एक वर्ष की अवधि में लगभग 15 टन मिट्टी पृथ्वी की सतह पर एकत्र कर देते हैं । चार्ल्स डार्विन के एक अनुमान के अनुसार अंग्रेजी बागों में कीड़े प्रतिवर्ष प्रति हेक्टेयर भूमि से 25.4 हजार किलोग्राम मिट्टी खोदकर सतह के ऊपर ला देते हैं । मानव भी एक जीव है तथा अपक्षय में सहायता करता है । खानें खोदना, सड़कों आदि के निर्माण के लिए सुरंगे बनाना, वनों को काटना आदि मानवीय क्रियाएं चट्टानों को निहायत निर्बल बना देती हैं । ।हमालय प्रदेश में वनों को काटने के कारण चट्टानें नग्न हो रही हैं जिनके अपक्षय के कारण गंगा तथा यमुना नदियों में अत्यधिक अवसाद की आपूर्ति होने से इनकी घाटी में अवसादी-निक्षेप के कारण घाटी की गहराई कम हो रही है तथा उनका उथलापन बढ़ता जा रहा है । परिणामस्वरूप बाढ़ का प्रकोप बढ़ रहा है ।

(ii) **वनस्पतियों द्वारा अपक्षय (weathering due to vegetation)**—वनस्पतियों द्वारा अपक्षय दो रूपों में होता है । प्रथम, यांत्रिक तथा द्वितीय, रासायनिक । यांत्रिक अपक्षय में वृक्षों , झाड़ियों तथा छोटे-छोटे पौधों की जड़ें पृथ्वी के अन्दर प्रदेश करती हैं, जिस कारण चट्टानों की दराजें जिनमें इनकी जड़ों का प्रवेश होता है, फैलने लगती हैं तथा तनाव के कारण विघटन होने लगता है । स्मरणीय है कि सभी प्रकार के पौधे, चाहे बड़े हों या लिचेन तथा फंजाई की तरह नगण्य हों, अपक्षय में सक्रिय भाग लेते हैं । वनस्पतियों द्वारा रासायनिक अपक्षय कम महत्वपूर्ण नहीं है । प्रायः सभी प्रकार की वनस्पतियों की जड़े चट्टानों के कुछ तत्वों को अपने अन्दर समाविष्ट कर लेती हैं, जिससे चट्टानें कमजोर हो जाती हैं । वनस्पतियों की जड़ों में प्रायः जलयुक्त वैक्ट्रीया होते हैं जो कि चट्टानों के खनिजों को घुलाकर उनसे अलग कर लेते हैं तथा चट्टान को कमजोर बना देते हैं । वनस्पतियों तथा जीवों के अवशेष जल में पड़कर सड़ते हैं, जिस कारण उनसे कार्बन-डाई-आक्साइड, आर्गेनिक एसिड आदि अलग हो जाते हैं तथा इनके सम्मिश्रण से जल एक सक्रिय घोलक कारक हो जाता है तथा चट्टानों के खनिजों को अलग कर लेता है । वनस्पतियों के अवशेष के सड़ने से प्राप्त ह्यूमस तत्व लिमोनाइट को घुला कर अलग कर लेता है ।

उपर्युक्त विवरण से यह तात्पर्य नहीं है कि वनस्पतियों का कार्य सदैव चट्टानों में विघटन तथा वियोजन उत्पन्न करना ही है, वरन् ये चट्टानों के संरक्षक का भी कार्य करती हैं । पौधे तथा वनस्पतियों की जड़ों द्वारा चट्टानें आपस में बंध जाती हैं, जिससे अपक्षय तथा अपरदन के लिए सघन तथा संगठित हो जाती हैं । वनस्पतियों के अभाव में अपरदन इतना अधिक सक्रिय हो जाता है कि भूमि पूर्णतया अनुपजाऊ हो जाती है । संयुक्त राज्य अमेरिका के केण्टुकी, वर्जीनिया, टेनेसी आदि प्रान्तों में इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं । हिमालय प्रदेश में वनों के अनावरण से अपक्षय (यांत्रिक तथा रासायनिक) की सक्रियता में वृद्धि हो रही है । अपक्षय की उपर्युक्त क्रियाएँ प्रायः अलग-अलग कार्य नहीं करती हैं, वरन् एक दूसरे के सहयोग के साथ सक्रिय होती हैं । अतः अपक्षय

के एक प्रकार को दूसरे से अलग करना न्यायोचित नही है।

अपक्षय का भ्वाकृतिक प्रभाव

(i) अपक्षय द्वारा चट्टान-चूर्ण का निर्माण होना – जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि अपक्षय के विभिन्न प्रकारों-भौतिक, रासायनिक तथा प्राणिवर्गीय अपक्षय — द्वारा चट्टानों में ढीलापन आ जाता है तथा चट्टान विघटित तथा वियोजित होकर छोटे-छोटे टुकड़ों में टूटती रहती है, जिससे अधिक मात्रा में भग्नचट्टान चूर्ण का निर्माण होता है। पृथ्वी की ऊपरी सतह में जिस सीमा तक अपक्षय का प्रभाव होता है, उसे 'अपक्षय मण्डल' कहते हैं । अपक्षय मण्डल का विस्तार सर्वत्र समान नहीं होता है, वरन् स्थान-स्थान पर अलग-अलग होता है । अपक्षय मण्डल की गहराई दो बातों पर आधारित होती है– प्रथम, जलतल (water table) की स्थिति तथा द्वितीय, अपक्षय होने का समय । अपक्षय द्वारा उत्पन्न चट्टान-चूर्ण का आर्थिक दृष्टि से अधिक महत्व होता है । इन्हीं चट्टान-चूर्णों द्वारा मिट्टियों का निर्माण होता है, जो कि कृषि का मुख्य आधार है । चट्टानों के टूट-फूट से कई प्रकार के खनिजों की प्राप्ति हो जाती है, जो कि औद्योगिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होते हैं । जिप्सम तथा चूना आदि की प्राप्ति इसी प्रकार से होती है । पहाड़ी भागों में अपक्षय के कारण चट्टानें विघटित हो जाती हैं तथा भूमि-स्खलन के फलस्वरूप चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़े नीचे गिरते हैं, जिनसे कभी-कभी मानव तथा मानव आवास को पर्याप्त क्षति होती है । प्रायः इन टुकड़ों द्वारा पहाड़ी भागों में नदियों का मार्ग अवरूद्ध हो जाता है तथा इस प्रकार झीलों का निर्माण होता है । शीतप्रधान भागों में अपक्षय के कारण हिम के बड़े-बड़े टुकड़े सागरों में उतर आते हैं, जिससे जलयानों को क्षति उठानी पड़ती है ।

(ii) अपक्षय अपरदन के लिए सामग्री प्रदान करता है– अपक्षय द्वारा चूँकि चट्टानें ढीली तथा कमजोर हो जाती हैं, अतः इससे अपरदरन का कार्य आसान हो जाता है क्योंकि अपरदन के विभिन्न साधन-आर्द्र प्रदेशों में बहता जल, उष्ण एवं शुष्क मरुस्थलीय भागो में वायु, शीत-प्रधान प्रदेशों में हिमानी तथा सागरीय लहरें आदि (सागरीय तटों के किनारे पर) इन विघटित चट्टानों को आसानी से काट कर अपने साथ बहा ले जाते हैं) । अपरदित पदार्थों का परिवहन करते रहते हैं । इतना ही नहीं, जब अपक्षय से प्राप्त पदार्थों का अपरदन के कारकों द्वारा परिवहन होता है तो ये पदार्थ आपस में टकरा कर तथा तली को कुरेद कर अपरदन के कार्य में सक्रिय सहयोग देते हैं । यहाँ तक कि अपरदन के समय (बहते जल द्वारा) भी रासायनिक अपक्षय होता रहता है, जिससे नदी-घाटी के किनारे की चट्टानें वियोजित होकर टूटकर जल के साथ हो लेती हैं ।

(iii) अपक्षय द्वारा धरातल का नीचा होना – अपक्षय के विभिन्न साधनों द्वारा चट्टानों में टूट-फूट होती रहती है तथा प्राप्त चट्टान-चूर्ण का अन्यत्र स्थानान्तरण होता रहता है । फलस्वरूप धरातलीय सतह नीची होती रहती है ।

(iv) स्थलाकृतियों का निर्माण – विशेषक अपक्षय (differential weathering) द्वारा विभिन्न स्थलरूपों का निर्माण होता है यथा– जालीदार पत्थर (stone lattice), हागबैक, अपदलन गुम्बद (exfoliation domes), मेसा, बुटी (buttes) के निर्माण का प्रमुख कारण विशेषक अपक्षय (defferential weathering) ही बताया गया है, परन्तु यह स्मरणीय है कि इनके निर्माण में नदियों के बहते जल का योगदान अधिक रहता है । अपक्षय से प्राप्त मलवा के स्थानान्तरण तथा उनके जमाव से कई प्रकार की स्थलाकृतियों का निर्माण होता है, जैसे —**टालस शंकु** (talus cone), **टालस पंख** (talus fans) आदि तथा इन पदार्थों के ढाल के सहारे सर्पण (सरकना) के समय वेदिकाओं की रचना होती है ।

इस प्रकार यदि देखा जाय तो अपक्षय तथा विशेषक अपक्षय स्वतंत्र रूप में उच्च पर्वत-चोटियों के निर्माण तथा परिवर्तन से लेकर चट्टान-चूर्ण के संचयन तथा जमाव से उत्पन्न स्थलाकृतियों का निर्माण करते हैं। वास्तव में विशेषक अपक्षय के कारण कठोर शैल-भाग सतह पर उच्चावच्च के रूप में प्रकट हो जाते हैं । उपसंहार के रूप में यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त स्थलाकृतियों का निर्माण केवल विशेषक अपक्षय द्वारा सम्पन्न हुआ है, बताना कठिन है क्योंकि विशेषक अपक्षय शायद ही अन्य अपरदन के साधनों से अलग होकर कार्य करता हो तथा स्वतंत्र स्थलाकृतियों के निर्माण में समर्थ हो । वास्तव में अपक्षय तथा अपरदन द्वारा उत्पन्न स्थलाकृतियों में यह विभेद करना कठिन हो जाता है कि कितना कार्य अपक्षय ने किया है तथा कितना कार्य अपरदन ने । इतना अवश्य है कि साधारण स्थलाकृतियों के परिवर्तन तथा निर्माण में विशेषक अपक्षय का महत्व कम नहीं है ।

अपक्षय के भौतिक, रासायनिक तथा प्राणिवर्गीय साधनों द्वारा चट्टानों में विघटन तथा वियोजन द्वारा प्राप्त असंगठित पदार्थों को **चट्टानचूर्ण या नष्ट चट्टान अवशेष या भग्न राशि** (rockwaste) कहते हैं । भग्न चट्टानपूर्ण का ऊपरी ढाल से गुरुत्व तथा जल के स्नेहन (lubrication)

द्वारा नीचे की ओर **सामूहिक स्थानान्तरण** (masstranslocation) होता है तथा उनका ढाल की पदस्थली पर भग्नाश्म राशि या टालस (screes or talus) के रूप में जमाव हो जाता है। सामूहिक स्थानान्तरण कई रूपों में होता है, जिसमे प्रमुख हैं – भूमिसर्पण (earth creep or solifluction), भूमि-स्खलन (landslide), पंकवाह (mudflow) आदि। इनमें से भूमिस्खलन सर्वाधिक महत्वपूर्ण होते हैं। भूमिस्खलन के निम्न प्रकार होते हैं — 1. अवपतन (slump), 2. मलवा स्खलन (debris slides), 3. मलवा पात (debris fall), 4. शैल-स्खलन (rock slides) आदि। भूमि-स्खलन द्वारा कई स्थलाकृतियां बन जाती हैं, जिसमें प्रमुख हैं – क्षति चिन्ह (scar), वे दिकाएं (terraces), आदि। विशेष अध्ययन के लिए देखिये – भू-आकृतिक विज्ञान, सविन्द्र सिंह, पृष्ठ 347-356, पंचम संस्करण, 1985।